दृष्टि

दृष्टि एक तलाश है। हमारा दृष्टि हमेशा दूसरे को देखता है, अपने आप को नहीं देखता। यह बड़ा भार भूल है। यदि हमारा दृषिअट दूसरे के सिवाय अपने आप को देखे तो कल्याण होने में कोई देरी नहीं, पर वैसा होता नहीं, दृष्टि हमें मिली हुई है जिसे हम प्रत्यक्ष तौर पर देखता है, स्थूल दृष्टि जिसे हम कहताहै। इस दृष्टि द्वारा जल को देखेंगे, आकाश को देखेंगे, वायु को देखेंगे, पृथ्वी को देखेंगे और हर अपने से भिन्न पदार्थ को देखें या सूर्य, तारामंडल, चंद्रमा और भी जितने पदार्थ हैं। भिन्न-भिन्न पदार्थों को देखेंगे तो जो अपने से भिन्न है, अपने को कभी भी नहीं देखेंगे। यह इनका स्वभाव है। इसी तरहहारा बुद्धि का ज्ञान, हमारी बुद्धि के मुत्तलिक कभी नहीं देखेंगे। यदि हमारा बुद्धि का सोचना, अपने आप को सोचना हो तब जाकर उसका कल्याण होने में कोई देरी नहीं होती। ज़्योंकि बुद्धि का आधार वही है, उसके अलावा और कुछ काम नहीं कर सकता है।

बाहर या बहिरंग दृष्टि होने से बाहरले पदार्थों को देखता है। यही देखते हुए जिंदगी गुजर जाती है। मगर यह दृष्टि बदल कर, यह दृष्टि कभई भिन्न पदार्थ को कभी देख नहीं सकता। इसे यह दृष्टि देखा नहीं सकता ज़्योंकि हमारे जरिए से ही यह दृष्टि से ही यह दृष्टि देखता है, हमारे जरिए से ही यह सब काम करता है। मगर दृष्टि उसे देख नहीं सकता। एक स्पैशल दृष्टि हमारे अंदर है जिसरके जरिए से उसे देखा जा सकता है। वह आंख खुली हुई नहीं रहती, वह बंद ही सरती है। जितना भी जो प्रयत्न हम करते हैं, ईश्वर भाव से, ईशअवर प्राप्ति के लिए। भजन या कीर्तन से ही उस दृष्टि को खोलने के लिए ही प्रयत्न किया जाता है। वद दृष्टि खउल जाए तो ईश्वर कहीं दूर गया गुआ नहीं होता है। ज़्योंकि हमारा देखने का जो पदार्थज्ञ बहिरंग पदार्थ या दूसरे को देखने का आदी है, अपने को देखने का नहीं, ईश ॅवर को देखता नहीं। ईश्वर को यह देख भी नहीं सकता किसी भी सूरत में, इसकी गति ही नहीं। ईश्वर के पास जाने की इसकी कोई शक्ति भी नहीं है। मगर वह दृष्टि जो छिपा हुआ है, जिसके जरिए से यह भी सिद्ध होता है, वही दृष्टि ईश्वर के पास जाने के समर्थ होता है। जागृत न करने की वजह से, वह ईश्वर दृष्टि से हम वंचित ही रह

जाते हैं ज़्योंकि ईश्वर दृष्टि का आभाव कहीं भी नहीं होगा। ऐसा कोई जीव नहीं जिसमें ईश्वर दृष्टि का आभाव हो। सबमें वह ईश्वर दृष्टि है। मगर वह दृष्टि जागृत न होने की वजह से दूसरो को देखने का आदी बन जाता है। देखो न, किसी भी पदार्थ को हम समझते हैं, दूसरे पदार्थ को देखते, समझते हैं, मगर अपने आप को नहीं देखते। वास्तव में देखना, समझना उसी का था। जरूरत तो उसी को देखने की थी जो अपने आप को देख लिया। जरूरत तो उसका था, मगर वही तो हम नहीं काम करते। हम दूसरी ओर जाते हैं। इससे हमारा बुद्धि भ्रमित रहता है, दूसरी ओर जाते हैं। वह कैसा है, यह कैा है, जल किस तरह है, पृथ्वी किस तरह है, अग्नि किस तरह है। जैसे साइंटिस्टों ने किया। यह सारे का सारा अपने से भिन्न पदार्थों के साथ किया। यह नहीं सोचा कभी इस दृष्टि का जितना भी अनुसंधान हुआ, बारीक से बारीक भी हुआ, जिसे कहते हैं ऐटम का भी अनुसंधान हुआ, इतने सूक्ष्म पदार्थ का भी अुसंधान किया, उसका ऐटम का भेदन भी किया। उसकी शक्ति का भी संग्रह किया। मगर यह सोचने की कोशिश नहीं की कि आखिर ये सब कुछ कहां से, किसके जरिए से हुआ? यह सोचने का हमने कभी प्रयत्न ही नहीं किया। वास्तव में देखा जाए तो ऐटम आदि के भेदन आदि में साइंस ने दजो भी तरज़्की की, यह सब बुद्धि में छिपी चेतना शक्ति जो है, उसके ही जरिए से यह क्या गया है। यह सब उसी के जरिए से संभव हुआ। वह न हो तो यह सब किसी तरह संभव नहीं। साइंस ने जो भी तरज़्की किया, बुद्धि के जरिए से ही तरज़्की किया, बुद्धी की जरिए से ही इसका भेदन किया। जो कुछ भी आविष्कार वगैरा हुआ, बुद्धि के जरिए से ही क्या। यह सब बुद्धि के जरिए किया। बुद्धि न हो तो यह सब कभी भई किसी भी सूरत में कामयाब नहीं हो सकता था। यदि बुद्धि के जरिए से हुआ हो, तो पहले वह बुद्धि में होना मानना पड़ेगा। जहां से जो वस्तु पैदा हो, वहीं से कुछ पैदा हो सकता है। ज़्योंकि जिसके अंदर कुछ नहीं उसके अंदर से वह कभी भी पैदा नहीं हो सकता। यह साइंज वगैरा बुद्धि के अंदर पहले से बी मौजूद न हो तो बुद्धि में यह कभी भी पैदा नहीं हो सकता। इससे सिद्ध होता है यह पहले ही बुद्धि के अंदर छिपा हुआ है।

यह न समझना सिर्फ एक बुद्धि के अंदर छिपा हुआ है। वह हरेक बुद्धि में मौजूद है। मगर उसे किसी ने जाग्रत नहीं किया। जिसने जागृत किया, जहां तक जागृत किया वह उसने पहचाना। यह न समझना उतना ही वह। वहां लगता है। बुद्धि का विकास बहुत लज़्बा चौड़ा है, बहुत दूर तक उसकी गति है। सृष्टि के अंदर ऐसा कोई भी पदार्थ है इससे बाहर? वह कभी भई नहीं हो सकता। सब कुछ इसी में हो रह है। बुद्धि से बाहर कुछ नहीं हो सकता। आगे और भी उसमें बहुत सी चीजें और भी छिपा हुआ है जिसे जाग्रत करने में हम अभी कामयाब नहीं हुआ। मगर किसी टाइम पर जाग्रत हो भी सकता है, मगर फिर भी पूर्ण तौर पर नहीं होगा।

इसके पीछे है जैसे चेतन्य कहते हैं, बुद्धि जिससे हरकत करता है। बुद्धि अपने आप को पूर्ण कभी भी सिद्ध नहीं कर सकता। जीव-बुद्धि अभेद को कभी भी सिद्ध नहीं कर सकता है किसी भी सूरत में। जहां तक भी भेद-बुद्धि है यह सब बुद्धि द्वारा पैदा होता है। अभेद को बुद्धि सिद्ध नहीं कर सकता। अभेदत्व को जो सिद्ध करता है ह बुद्धि के पीछे काम करता है। जहां कल्पना होगा वहं भेद होगा। अभेद जो होता है वह कल्पना रहित अवस्था होता है। इसे बुद्धि कभी सिद्ध नहीं कर सकता है। बुद्धि का अस्तित्व कल्पना के अंदर छिपा हुआ होता है। कल्पना न हो तो बुद्धि का कोई अस्तित्व नहीं। परंतु अभेद अवस्था जो होता है वह बुद्धि के भई पीछे होता है। अभेदत्व, बुद्धि के पीछे होने केकारण बुद्धि अपने आप को हरकत में ले आने में काम करने में समर्थ होता है। यदि वह अभेद अवस्था पीछे छिपा न हो तो कुछ नहीं हो सकता। ज़्योंकि अभेद-अवस्था के बिना दुनिया में कोई भी क्रिया नहीं हो सकता है। हमें यह प्रतीत होता है कि दुनिया में जितना भी काम होता है यह बिना उसके क्रिया के होता है। यह बिलकुल गलत बात है। किसी भी चीजको हमने करना है तो अभेद बनना लाजमी है। जैसे हम किसी को भी देख लो, तो हमारी बुद्धि क और उसका अभेदता होना लाजमी है, तभी वह नजर आएगा। जब तक हमारा बुद्धि ससे अभेद नहीं होता, उसी की शज़्ल नहीं बनता, तब तक वह चीज कभी भी हमें नजर नहीं आ सकती। या इसी प्रकार किसी भी चीज को स्वाद लेना हो तो अभेद अवस्था को प्राप्त

करना होगा। जब अभेद अवस्था होगा तभी जाकर उसका स्वाद ले सकते हैं। इसी तरह सृष्टि में किसी चीज को सिद्ध करना हो चो अभेद अवस्था बहुत लाजमी है, बिना अभेद अवस्था के कुछ भी सिद्ध नहीं किया जा सकता। अभेद अवस्था को यथार्थ रूप में बम समझ नहीं रहा। जब जब हम बुद्धि से काम लेता है, वह हमें बिलकुल भिन्न भिन्न प्रतीत होता है। मगर जो भिन्न अवस्था होता है वह कल्पना होता है, वह यथार्थता नहीं है, ज़्योंकि इसके अंदर जो अभेद अवस्था होता है वही यथार्थ अवस्था होता है। वह बुद्धि के पीछे छिपा होता है। भेद अवस्था, बुद्धि के अंदर जब कल्पना शउरू होता है तो भेद अवस्था शुरू हो जाता है। जब बुद्धि की कल्पना लय हो जाता है तो अभेद अवस्था शुरू हो जाता है। उस अभेद अवस्था से ही सृष्टि का काम चलता है।

द्वैत से सृष्टि का कोई काम नहीं चलता, किसी भी सूरत मेंष वैसे भ्रम से हम यह समझ बैठता है कि द्वैत से बी सृष्टि का काम चलता है। यह कभी भई संभव नहीं हो सकता। मैं पहले कह चुका हूं किसी भी चीज को समझना हो, उससे कोई भी काम कराना को तो अभेद होना लाजमी है। अभेद के बिना कुछ नहीं हो सकता। ज़्योंकि बिना अभेद हुए सृष्टि का कोई भी ताम नहीं हो सकता। इसकी वजह ही यही है कि इसकी जड़ में अभेद अवस्था छिपा हुआ है। मगर उसे हम देखता नहीं, किसी भी सूरत में हम देखता नहीं ज़्योंकि हमारी दृष्टि भेद-दृष्टि है, भेद दृषिअट में ही अलगाव है, भिन्न है। अलहदगी है। अलहदा कब प्रतीत होता है? जब भेद प्रतीत नहीं होता। शस्त्रकारों ने या महात्मा लोगों ने हमें शिक्षा दिया है कि किसी भी ढंग से, किसी भी प्रकार से, वैसे गारंटी नहीं कि फलाने ढंग से ही करना है, किसी भी ढंग से उस अभेद अवस्था वाली दृष्टि को खोलने में समर्थ हो जाओगे, अपने आप को देखने लग जाओगे। जब तक वह अभेद अवस्था नहीं खोलोगे तब तक कभी भी कामयाब नहीं हो सकेगा। जितने भी साधन शास्त्राकार बताता है, तो गहराई से तुम देखोगे, उसी दृष्टि को खोलने की कोशिस है और कुछ नहीं, जो हमारी बुद्धि में छिपा हुआ है। अपने आप को देखने की जो दृष्टि है उसे खोलने का। वैसे अभी भी है वह दृषिअट, सुप्त अवस्था में है, पूरे रूप से जाग्रत अवस्था में है, पुर्ण रूप से नहीं है। पूर्ण

रूप से न होने की वजह से वह पता नहीं लगता है, उस अभेद दृष्टि को खोलने का ही प्रयत्न है। वह खुल जाए तो जीव का कल्याण उसी सैकेंड हो जाएगा और मनुष्य का कल्याण होने में कोई भी देरी नहीं लगता। स्वतंत्र होने के लिए, मुक्त होने के लिए कोई देरी महीं लगता है। यदि हमारी वह अभेद दृष्टि खुल जाए, वह दृष्टि खुलते ही हम बिलकुल स्वतंत्र हो जाएंगे। उसके अंदर कोई बंधन नहीं होगा। इसलिए कहता है कि बंधन रहित जो स्वतंत्र अवस्था होता है, वही मुक्तावस्था होताहै, ज़्योंकि इसके अंदर छिपा हुआ अभेद जो है वह बिलकुल स्वतंत्र होता है। अभेद कभी भई बंधन में नहीं आता। बंधन किसमें होता है? भेद दृष्टि ही बंधन में आता है। अभेद अवस्था जो है वह बंधन में नहीं है। अभेद अवस्था जाग्रत होते ही स्वतंत्र हो जाओगे।

मनुष्य जीवन के अतिरिक्त और किसी में यह खूबी नहीं कि उस अभेद अवस्था को पहचान सके। केवल मनुष्य योनी में आकर ही हम उस आनंद अवस्था को पहचान सकते हैं। इस आधार को हम पहचान सकते हैं। जिनता भी ब्रह्मांड है, इस ब्रह्मांड के आधार को हम समझ सकते हैं और किसी योनी के अंदर यह खूबी नहीं। क्रिया कै कल्प है कि मनुष्य योनी में ही कुछ कर सकते हो। सब कुछ कर सकते हो – भोग–खाना, पीना। पशुभी यह सब करता है। मगर मनुष्य के अंदर यदि कोई विशेषता है तो यही विशेषता है कि वह उस अवस्था को पहचान सकता है। उसके लिए वह दृष्टि खोलना पड़ेगा।

यह बाहरी दृष्टि से देखने का जो भाव है, इस भाव को मिटाना होगा। दूसरे को देखने के भाव को छोड़ कर जब हम अपने को देखने में समर्थ हो जाएंगे, यह सृष्टि सारे की सारी ब्रह्मांड हो जाएगी। ज़्योंकि दृष्टि के जरिए से ही सृष्टि तुज्झें प्रतीत होती है न। तुम कल्पना करते हो, या देखते हो या मित्र–शत्रु भाव–ह दृषिअट के जरिए से ही तुम बनाते हो। दृष्टि के जरिए से ही। मगर ये बाहरले पदार्थ को ही देखते हैं, अंदरले पदार्थ को नहीं। दूसरे को देखते हो, अपने आप को कभी नहीं देखते। यदि अपने आपको देखने का अज़्यास रोगे तो वह दृष्टि तुज्हारे मित्र बन जाएगा। यह बाहरी दृष्टि वास्तव में हमारा मित्र

नहीं शत्रु है। शत्रु होने के बावजूद भी, अज्ञान की वजह से इसे ही हम अपनाते हैं। और इसी के जरिए से ही रोग-द्वेष, वैर-विरोध, दुनिया भर के इस बहिरंग दृष्टि से ही पैदा होते हैं। बहिरंग दृष्टि का भेदन हो जाए और अंदरूनी हमारी दृ्टि अपने आप को देखने लग जाए तो बहिरंग दृष्टि क्रम हो जाएगा। उसके बाद अपने आप यह सारी सृष्टि ईश्वरमय बन जाएगा। उसी टाइम बन जाएगा। उसकी नजर के अंदर ईश्वर के सिवाय और कोई पदार्थ कभी नजर नहीं आ सकता है। जैसे इन आखों के अंदर रोग-द्वेष, वैर-विरोध हमें अपने से भिन्न नजर आता है। इसी प्रकार जब अपने आप को देखने की दृष्टि खुल जाएगी औप अपने आप को देखने लगोगे तो यह सारी सृष्टि अपने आप के रूप में ही नजर आएगा, और कोई पदार्थ नहीं। यह अभिन्न अवस्थआ होता है। इश अभिन्न अवस्था के लिए ही दुनिया कोशिश करता है। भिन्न रहना कौन चाहता है? सृष्टि में महदूद रहना कौन चाहता है? कोई इस सृष्टि के अंदर महदूद हना चाहता है? कोई भी नहीं चाहता। वह समझेगा कि सृष्टि के अंदर महान से महान हम हों। हमारे ह्रदय में महान बनने की यह चाह पैदा होती है। महान बनने की चाह किसके अंदर नहीं है। महान बनने की इच्छा हमारे अंदर है तो हमारे अंदर महान होना मानना पड़ेगा। तभी जाकर यह हमारे अंदर यह इच्छा पैदा होता है, मगर अज्ञान की वजह से उसे हम समझ नहीं रहा, देख नहीं रहा। उसे देखने की दृष्टि हमारा खुला नहीं है। जब उस पर नज़र पड़ जाती है। महान स्वयं सिद्ध हो जाता है। बनाने से जो महान बनता है, वह तो महदूद अवस्था होता है, कल्पित अवस्था होता है। कल्पित महानपन कभी भी कायम नहीं रहेगा, वह बदल जाएगा। कई किस्म का परिवर्तन उसमें बन जाएगा। मगर अकल्पित जो महानता है वह कभी भी खण्डित नहीं होता। अखण्ड रूप से वह रहता है। लक्ष्य भई यटहीं है ज़्योंकि हम सब महान बनना भी चाहते हैं। इसे मिटाना भी हम नहीं चाहते, हमेश कायम रखना चाहते हैं। यह उसका स्वभाव है।

कहानता को कौन कायम नहीं रखना चाहता? कोई ऐसा जीव है जो महानता को कायम नहीं रखना चाहता। हरेक चाहता है और कोशिश भी इसीलिए करता है। मगर अज्ञान होने की वजह से, वह दृष्टि उसकी खुली न होने की वजह से कामयाबी इसके

अंदर नहीं होती। नाकामयाबी का मूल कारण है–मन की कल्पना, मन की शुद्ध न होना, मन का विकार रहित न होता। यही इसका मूल कारण है। इसीलिए शास्कारों ने या महात्मा लोगों ने हमें शिक्षा दिया कि यदि खोलना चाहते हो, तुझ्हें चाहिए मि पर कंट्रोल रखने का अज़्यास करना होगा। जब तक मन किसी एक स्थान पर ठहरेगा नहीं, तब तक वह मन पर कंट्रोल नहीं होगा। इसीलिए शास्त्राकारों ने कहा इसे ईश्वर की तरफ लगाओ, परमात्मा की तरफ लगाओ या अपने आत्मा के अनुसंधान के अंदर लगाओ या किसी जप–तप के अंदजर लगाओ। इन जगहों पर लगाया जाता है कि किसी तरह मन एक जगह इकट्ठा हो सके, एकाग्र होने का आदि बन जाए। मन को यहआदत पड़ जाए तो दोबारा उसे किसी स्थान पर लगाना चाहो तो सुविधा से उसे ठहरा सको। जब तक यह आदत नहीं होता एक जगह ठहरने का, तब तक वह किसी भी जगह पर ठहर नहीं सकता, यह कहीं भी ठहर नहीं सकता।

यह चंचलता के अंदर, भेद–दृष्टि के अंदर, इसमें रोग–द्वेष पैदा होंगे, वैर–विरोध पैदा होगा, और भी बहुत कुछ उपद्रव हो जाएगा, हम न चाहते हुए भी यह सब कुछ हमें हो जाता है। रोग–द्वेष को कौन चाहता है? ज़्या कभी रोग द्वेष को चाहता है? हमें तो नज़र नहीं आता कि कोई रोग–द्वेष को चाहता हो। ज़्योंकि रोग–द्वेष के वजह से ह्रदय के अंदरजलन पैदा हो जाता है, अशांति पैदा हो जाता है। जलन या अशांति को कौन चाहता है? सृष्टि के अंदर कोन जीव है जो अशांति चाहता है? हर कोई शांति से रहना चाहता है। शांति से रहना चाहने के बावजूद भी वह शांत नहीं बैठा रह सकता। इसका वजह ज़्या है? अंत: करण के चंचलता की वजह से, बुद्धि अस्थिर होने की वजह से। अस्थिर बुद्धि के अंदर कई किस्म के विकार पैदा हो जाते हैं? अस्थिर बुद्धि के अंदर ही विकार पैदा होता है। ज़्यों पैदा होता है? अस्थिरता की वजह से, मानसिक कमजोरी की वजह से अस्थिरता पैदा हो जाता है। कमजोरी ज़्यों पैदा होता है? यथार्थ ज्ञान के अभाव की वजग से कमजोरी पैदा होता है। ज़्योंकि यथार्थ ज्ञान का पता नहीं होता, इसकी वजह से उसके अंदर कमजोरी पैदा हो जाता है। कमजोरी ही इस तमाम उपद्रव का जड़ होता है।

उस कमजोरी को मिटाना हो तो बुद्धि को इसी तरफ लगाना होगै जो तमाम शक्ति की खान है। बुद्धि उधर लग जाए तो कमजोरी आपे दूर हो गाएगा।

तमाम शक्ति का खान कौनसा है? वही जो बुद्धि के पूछे छिपा हुआ है, जो आत्म तत्व है, जो ब्रह्म तत्व है, वही तमाम शक्ति का भण्डार है। उसके अभाव के अंदर, सृष्टि में कोई भी शक्ति नहीं है। शक्ति कोई पदार्थ है तो उसी की ही शक्ति है। हम चलते हैं, फिरते हैं, उठते हैं, बैठते हैं, देखते हैं, सूंघते हैं और भी जितनी भी क्रिया हम करते हैं, सब उसी के जरिए से करते हैं। मन भी सब कुछ क्रिया करता है उसी के जरिए से करता है। उसके अभाव के अंदर मन के अंदर कोई शक्ति नहीं होगी। उसके बिना वह शव बन जाएगा। शक्ति न हो तो वह शव बन जाएगा। और ज़्या होगा? शव ही होगा। शिव और शव दो शब्द माना जाता है। यदि इसके अंदर शिव न हो तो यह शव माना जाएगा। शिव की मौजूदगी के अंदर ही यह जिंदा माना जाता है, तो कहने का हमारा मतलब है वास्तव में शिव इसके अंदर मौजूद हो तो कोई भी क्रिया, किसी भी पदार्थ में जो कोई क्रिया प्रतीत होता है, वह सब उसी के जरिए है। इसके बिना कुछ भी सिद्ध नहीं होगा। क्रिया-रहित कोई भी पदार्थ कभी भी सिद्ध नहीं हो सकता है।ेसा भी कोई पदार्थ है जिसके अंदर क्रिया मौजूद न हो। जिस कपड़े को तुने पा रखा है उसमें भी क्रिया मौजूद है। क्रिया मौजूद न हो तो वह कपड़ा कपड़ा नहीं होगा। उसके अंदर वह

खूबी नहीं होगा जो हमारे शरीर को ढक सके, गर्मी सर्दी से बचा सके। यह क्रिया शज़्ति ही तो है, यह क्रिया शज़्ति कपड़े से भी मौजूद है। जन जिन पदार्थों से तुम काम लेते हो, उन सब पदार्थों में क्रिया-शज़्ति मानना होगा तभी जाकर उससे काम लेते हैं। जिसके अंदर क्रिया न हो तो उसके अंदर वह गुण कैसे होगा? यदि औषधि कहते हो औषधि में वह क्रिया-शज़्ति मौजूद होता है। बिना क्रिया-शज़्ति की वह औषधि औषधि नहीं होगा। अनंत रोगों को नाश करने की शज़्ति औषधि में होगा तो वह क्रिया-शज़्ति के अभाव में नहीं हो सकता। यह एक क्रिया-शज़्ति होता है। इसी प्रकार एक लोहे का टुकड़ा ले लिया जाए तो उसमें भी वह क्रिया-शज़्ति छिपा होता है। क्रिया-शज़्ति न हो तो उसमें

वह कठोरता नहीं आ सकता है, काटने का शज़्ति नहीं आ सकता है और मजबूतीपन नहीं आ सकता। मजबूती भी एक क्रिया होता है। जिसे हम एक जड़ पदार्थ मानते हैं, पत्थर को हम मोटे तौर पर जड़ कहते हैं। वैसे जड़ तो कोई पदार्थ कभी भी हो ही नहीं सकता। पत्थर के अंदर क्रिया-शज़्ति मौजूद है। क्रिया-शज़्ति होने की वजह से ही वह कई काम आता है। कोई भी वस्तु, सृष्टि के अंदर कोई काम देता है तो उसके अंदर क्रिया-शज़्ति मानना होगा। तभी वह काम देता है। क्रिया-शज़्ति न हो तो उसका अस्तित्व सिद्ध नहीं होगा, तो देखा जाये तो सृष्टि में तुम ऐसा कोई भी पदार्थ सिद्ध नहीं कर सकते जिसके अंदर वह सूक्ष्म क्रिया-शज़्ति काम नहीं करती।

क्रिया-शज़्ति के रूप में वही काम करता नज़र आता है। जहां भी बुद्धि जाये, जहां भी मन जाये, जहां भी नज़र जाये वह क्रिया-शज़्ति ही काम करता हुआ नजर आता है। जैसे सूर्य के अंदर बुद्धि जाता है, तो ज़्या सूर्य के अंदर क्रिया-शज़्ति का अभाव मानेंगे। यदि सूर्य के अंदर क्रिया-शज़्ति का अभाव मान लिया जाये तो हमारी बुद्धि कभी भी उसके अंदर प्रवेश नहीं कर सकती। जिस पदार्थ के अंदर भी हम प्रवेश कर जाते हैं, मन-बुद्धि वगैरा प्रवेश कर जाता है, लाज़मी है उसके अंदर क्रिया-शज़्ति मानना पड़ेगा ज़्योंकि प्रवेश करने के गुंजायश तभी मिलता है जब उसके अंदर क्रिया-शज़्ति हो। नहीं होगा तो कभी भी नहीं हो सकता है। तो सूर्य के अंदर क्रिया-शज़्ति प्रत्यक्ष नज़र आता है कि एक लाख पचासी हज़ार मील की सैकण्ड की स्पीड से वह गतिशील रहता है तो उसके अंदर भी हम प्रवेश कर जाता है। तो सिद्ध हुआ कि हमारी दृष्टि या बुद्धि उससे भी अधिक गतिशील है। उससे भी अधिक तेजी से यह दौड़ता है ज़्योंकि उसके अंदर क्रिया-शज़्ति छिपा है।

वह बुद्धि के भी पीछे जो चेतन्य शज़्ति है, वही ब्रह्माण्ड की क्रिया-शज़्ति है। यह क्रिया-शज़्ति ही आनंद की शज़्ल में खड़ा हुआ है। वह क्रिया-शज़्ति ही ज्ञान का शज़्ल में खड़ा है। ज्ञान जिसे हम कहते हैं, वास्तव में वह क्रिया-शज़्ति ही है। क्रिया-शज़्ति न हो तो ज्ञान कैसे होगा? ज्ञान का अस्तित्व इसके बिना कभी भी सिद्ध नहीं हो सकता।

इसी प्रकार जितना भी सृष्टि के अंदर दुख-सुख या और कुछ भी भासता है, यह सभी क्रिया के जरिए से ही व्यापक है। क्रिया के जरिए से ही यह सब कुछ होता है। क्रिया की शज़्ल में वही चेतन शज़्ति छिपा हुआ है। उसे ही चेतन्य कहते हैं। उसी के ज़रिए से ही सृष्टि का अस्तित्व है। वह न हो तो सृष्टि कायम नहीं रह सकता। मतलब यही है कि उस क्रिया-शज़्ति पर हम विचार नहीं करते। उसे देखने का हम अज़्यास नहीं करते। उस तरफ हमारी दृष्टि ही नहीं है। हमारा दृष्टि उसे देखता ही नहीं। हम दूसरों को देखने का आदी है। वह अपने से भिन्न नहीं होता। क्रिया-शज़्ति कभी भी अपने से भिन्न नहीं हो सकता किसी भी सूरत में किसी से भी भिन्न नहीं हो सकता। पत्थर से भी क्रिया-शज़्ति भिन्न नहीं होगा। लकड़ी से भी क्रिया-शज़्ति भिन्न नहीं होता। कपड़े से भी क्रिया-शज़्ति भिन्न नहीं होगा। इसी प्रकार जितने भी पदार्थ तुज़्हें मिलेगा वह क्रिया-शज़्ति से अभिन्न ही रहेगा। भिन्न कभी भी नहीं हो सकता, कभी भी नहीं हो सकता।

इसी प्रकार हमारे छिपा हुआ बुद्धि जो होता है वह उससे भिन्न कभी भी नहीं हो सकता। क्रिया-शज़्ति से भिन्न कभी नहीं होगा। वह क्रिया-शज़्ति ही बुद्धि की शज़्ल में खड़ा हुआ है। मगर अज्ञान की वजह से हम उसे देखता नहीं। वह क्रिया-शज़्ति से भिन्न नहीं होगा। क्रिया-शज़्ति ही बुद्धि की शज़्ल में सब काम करता है, मगर अज्ञान के कारण उसे हम देखते नहीं, दूसरों को देखने का आदी है। सृष्टि, क्रिया-शज़्ति होने के बावजूद भी उस क्रिया-शज़्ति हो हम देखते नहीं किसको देखेंगे? शज़्ल को देखेंगे, रूप को देखेंगे, क्रिया-शज़्ति को नहीं देखेंगे? ज़्या क्रिया-शज़्ति के बिना हमारा रूप, शज़्ल कायम रह सकता है? कभी भी नहीं रह सकता। रूप, शज़्ल जो कुछ भी कायम रहता है उस क्रिया-शज़्ति के जरिए से ही कायम है। उसके बिना एक सैकण्ड के लिए भी यह कायम नहीं रह सकता। मगर हम उसे कभी भी देखेंगे नहीं। हमारी दृष्टि कभी भी उस पर नहीं पड़ेगा। हमारा वह आंख खुला नहीं। अपने आप को देखने का आंख खुला नहीं। वह अपने आप की शज़्ल में ही छिपा हुआ है हर चीज के अंदर। मगर उसे देखने का हमारा आंख नहीं। इस वजह से हम उसे नहीं देखता है। हमारा आंख है दूसरे को देखता है। दूसरे को क्रिया-

शज़्ति से भिन्न, ऊपरी शज़्ल जो हमें नज़र आता है, उसे देखने का हम आदी है। उसी को सच मान बैठता है। उसी के पीछे हम पागल हुआ फिरता है।

उसके पीछे देखो। चाहे थोड़ी देर के लिए ही विचार करके देखो, जिस पदार्थ के अंदर उस क्रिया–शज़्ति का अभाव है, ज़्या उस पदार्थ को तुम प्राप्त करने की कोशिश करोगे। जिस पदार्थ को तुम प्राप्त करने की कोशिश करोगे तो कुछ न कुछ गुण उसके अंदर छिपा है। यह गुण ही क्रिया है। क्रिया के बिना कोई पदार्थ सिद्ध नहीं हो सकता। सृष्टि के अंदर ज़्या कोई ऐसा पदार्थ है जिसके अंदर क्रिया मौजूद न हो। क्रिया हरेक के अंदर है मगर उसे हम देखता नहीं। देखता इसलिए नहीं कि हम अपने आप को कभी नहीं देखता। अपने आप के शज़्ल में वह क्रिया–शज़्ति छिपा हुआ है, उसे देखने वाली दृष्टि हमारे पास है नहीं। इसलिए हमारा कहने का मतलब है कि यदि मनुष्य जीवन को सफल बनाना है तो उन आंखों को खोलने का कोशिश करो। उसके लिए कोई भी ढंग अपना लो। मैं पहले कह चुका हूं कि जितने भी साधन होता है, यह एक जरिया मात्र होता है कि जब लक्ष्य प्राप्ति हो जाता है हम जरिया को छोड़ देता है। कोई भी साधन अपना कर जब बुद्धि को स्थिर कर लेंगे, बुद्धि को शुद्ध कर लेंगे, जब दृष्टि हमारा खुल जायेगा, अपने आप को देखने का दृष्टि खुल जायेगा, उस टाइम जिस जरिये से हमने वह खोलने का यत्न किया, वह जरिया आपे ही छूट जाएगा, ज़्योंकि जरिया हमारा लक्ष्य नहीं होता। जरिए से हम किसी लक्ष्य को प्राप्त करने की कोशिश करता है। वह लक्ष्य ही वास्तव में हमारा शज़्ल है। वही ब्रह्म का शज़्ल है। जब तब यह दृष्टि खुलेगा नहीं तब तक हमारी जिंदगी कभी भी सफलीभूत नहीं होगा। जिंदगी सफल करना है तो वह दृष्टि खोलो कि जिसके जरिए से हम अपने आप को देख सकें। वह विचार शज़्ति खोलो जिसके जरिए से हम अपने आप को सोच सकें, दूसरे के लिए नहीं। और यह हमारा बुद्धि जो सोचेगा, दूसरे के लिए सोचेगा, अपने आप के लिए कभी भी सोचा नहीं। यह आदी ही नहीं है।

यह सोचना भी एक क्रिया–शज़्ति है। वह क्रिया–शज़्ति अपने आप को सोचता नहीं; दूसरे के लिए सोचता है। यह एक विचित्र तमाशा है। क्रिया–शज़्ति काम करते

हुए भी, क्रिया-शज़्ति अपने मुत्तलिक कभी भी नहीं सोचता। अपने लिए वह क्रिया-शज़्ति सोच लिया जाये तो फौरन कल्याण हो जायेगा, मगर नहीं सोचेगा, दूसरे के लिए ही सोचेगा। जितना साईंटिस्टों का अनुसंधान है, वह सारा दूसरे का ही, दूसरे के मुत्तलिक ही अनुसंधान किया। अपना अनुसंधान कभी नहीं किया। कभी सोचा ही नहीं, सोचा ही नहीं। कुछ लोगों ने सोचा तो उन लोगों ने बताया कि तुझ्हारे अंदर वह शज़्ति छिपा है। जब तक यह शज़्ति जाग्रत नहीं होता तब तक यह ज़िंदगी कभी भी, यह मनुष्य जीवन कभी भी सफलीभूत नहीं होगा।

दूसरों को देखेगा। दूसरा प्रकृति होता है। दूसरा हम किसको कहता है? प्रकृति को कहता है, कल्पना को कहता है। दूसरा जितना भी पदार्थ है, यह कल्पित है, एक माया है, प्रकृति है, कुछ भी उसे कहो। उसी के मुत्तलिक हम सोचता है। मगर उसके पीछे छिपा हुआ जो सूक्ष्म शज़्ति है, जो क्रिया-शज़्ति है, जो ज्ञान-शज़्ति है, जो इच्छा शज़्ति है, उसे हम कभी भी नहीं सोचते। यही हमारी अज्ञान अवस्था है। तो कहने का हमारा मतलब है, मनुष्य जीवन को सफल बनाना है तो अपने आप को देखने का अज़्यास करे। अपने आप को देखने वाली आंख को खोलो, तभी जाकर कल्याण होगा।

उस आंख को खोलना हो तो बुद्धि को स्थिर करना होगा। बुद्धि को स्थिर करने के लिए कोई भी ज़रिया अपना लो, राम-राम कहो और किसी भी शब्द से करो, या अष्टांग योग से बुद्धि को स्थिर करो, हठयोग के ज़रिए स्थिर करो, राजयोग के जरिए से स्थिर करो। किसी से भी, जिस किसी को जो अनुकूल हो, उसी प्रकार से बुद्धि को स्थिर करो। बुद्धि को स्थिर करने के बाद जो सोचना होगा, वह अपने आपको सोचना होगा। और किसी को कभी भी नहीं सोचेगा। बुद्धि को सीमित करने के कारण अपने आप को नहीं, दूसरे के मुत्तलिक ही सोचता रहा। यही बंधनों का कारण है और कोई बंधन नहीं। इसीलिए हमारा कहने का मतलब है कि यह बंधन से निकलना है। निकलने के लिए लाज़मी है कि अपने आप को देखने का अज़्यास करो, अपने मुत्तलिक सोचने का आदत डालो, तभी कल्याण होगा और कल्याण होने का कोई तरीका नहीं।